International Journal of Enhanced Research in Educational Development (IJERED)
ISSN: 2320-8708, Vol. 12 Issue 2, Mar.-Apr, 2024, Impact Factor: 8.376

भारत में जाति प्रथा का उद्भव एवं विकास

Mahendar Kumar

Associate Professor Govt College Bayana

भारत में जाति प्रथा के बारे मे विभिन्न विद्धवानो द्वारा विभिन्न मत व्यक्त किए गए है सर्वप्रथम सर हरबर्ट रिस्ले का कथन है कि ''जाति परिवारो के समूह को कहते है। उस समूह के सदस्यों का एक ही नाम होता है जो आमतौर से किसी ईश्वरीय या महान् मानवीय अस्तित्व से सम्बन्धित होता है। उनका एक ही व्यवसाय होता है और योग्य व्यक्तियों के विचारानुसार वे एक संयुक्त समुदाय है। डॉ. वी. ए. स्मिथ का मत है कि ''जाति परिवारों के समूह को कहते है जो धार्मिक संस्कारो और विशेषकर भोजन और विवाह सम्बन्धी रीतियों की पवित्रता के लिए एकत्र होते है ''। डॉ. शाम शास्त्री का कथन है कि ''आहार और विवाह-सम्बन्धी सामाजिक पृथक्त्व को ही जाति कहते है। जन्म और संस्कार का महत्व कम है। ''

जाति प्रथा की उत्पति:- जाति प्रथा के सम्बन्ध मे विद्वानो मे मतभेद है, किन्तु इतना सभी स्वीकार करते है कि यह एक अत्यन्त प्राचीन व्यवस्था है। प्रो. रैप्सन का विचार है कि सर्वप्रथम आर्यो और आदि अनार्यों के काले और गोरे रंग को लेकर ही जाति प्रथा का आरम्भ हुआ। आरम्भ में समाज दों भागो मे विभक्त था, आर्य और अनार्य। काले रंग के अनार्य आदिवासीं कालान्तर में शूद्र बना दिए गए।

डॉ. स्मिथ का लेख है कि जाति-सम्बन्धी अधिक भ्रम का कारण यह भी है कि मनु द्वारा प्रयुक्त शब्द वर्ण के जानबूझ कर गलत अर्थ लिए गए। वर्ण को जाति समझ लिया गया। यदि वर्ण शब्द का अनुवाद जाति न करके वर्ग, श्रेणी या इसी कोटि के किसी अन्य शब्द से किया जाता तो यह भ्रम पैदा न होता। मनु द्वारा लिखित जाति या वर्ग सम्बन्धी सामग्री का संग्रहकर्ता निश्चय ही यह जानता था कि जाति और वर्ण में क्या अन्तर है। उसने जातियों की संख्या 50 लिखी है, किन्तु वर्णो की संख्या केवल 4 बताई है।

शाम शास्त्री का विचार है कि ''प्रागैतिहासिक काल में जातियों के स्थान पर ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य और शूद्र चार वर्ण थे। शायद वर्ण शब्द का प्रयोग पहले पहल सभी प्रकार की जातियों के लिए होता था और शायद विभिन्न रंगों के वस्त्रों को धारण करने वाले वर्गो के आधार पर ही इस शब्द की उत्पत्ति हुई थी।

उदाहरणार्थ ब्राह्मणों के सफेद, क्षत्रियो के लाल, वैश्यों के पीले, और शूद्रो के काले वस्त्र हुआ करते थे''।
डॉ. शॅलिनसन का कथन है कि जाति एक पुर्तगाली शब्द है जिसका अर्थ है वर्ग की पवित्रता। जाति का आरम्भिक आधार था वर्ण (रंग)। गोरी चमडी वाले आर्य काली चमडी वाले दस्युओं को घृष्णा की दृष्टि से देखते थे।

डॉ. गोखले का कहना है कि जाति -व्यवस्था को स्पष्ट करने के लिए दो ही शब्दों का प्रयोग हुआ है। उनमें से पहला शब्द है वर्ण और दूसरा है जाति। पहले शब्द का सम्बन्ध रंग से है और दूसरे का जन्म से। इसी प्रकार क्रमशः पहला शब्द जातीय अन्तर से और दूसरा शब्द जन्म के अन्तर से सम्बन्धित है। इस प्रकार आर्य और अनार्य दो भिन्न जातियाँ बन गई। एक को आर्य वर्ण और दूसरे को दास वर्ण कहा गया। ऋग्वेद मे भी इनका इसी प्रकार वर्णन मिलता है। जब आर्य भारत पर आक्रमण करने आये तब वे धर्म, रंग, रीति - रिवाजों और शिष्टाचार की दृष्टि से अनार्यों से भिन्न थे। अतः परिणाम यह हुआ कि आर्य और अनार्य जाति के सर्वप्रथम दो विशाल वर्ग बन गए। राजनीतिक दृष्टि से भी दोनो भिन्न थे। आर्य विजेता और अनार्य विजितः आर्य गोरे थे और अनार्य काले। इस प्रकार दो वर्गो का बन जाना स्वाभाविक था।

नैस्फाल्ड ने लिखा है कि जाति - प्रथा का आधार लोगो द्वारा अपनाए जाने वाले भिन्न - भिन्न पेशे थेः जैसे शिकार, मछली पकडना, पशुपालन कृषि, शारीरिक श्रम या दास - कर्म व्यापार या पुरोहिताई।

सर हर्बट रिस्ले का कहना है कि जाति वर्ग का विषय है और नाक की आनुपातिक चौडाई के आधार पर जातीय उत्पति बताना अपने आप मे एक विरोधाभास सा लगता है। सेनार्ट ने इस विषय मे लिखा है कि जातियों को वैदिक युग के और मूल आर्यो के वर्गो से जोड दिया गया किन्तु जाति और वर्ग के अर्थ के विषय मे विद्धानों मे पर्याप्त मतभेद है। '' वर्ग राजनीतिक माँग की पूर्ति करता है '' और '' जाति का सीधा सम्बन्ध है धर्म के पालन, परम्परागत विश्वासों और स्थानीय प्रभावों से जिनका वर्ग हित से कोई सम्बन्ध नही। जाति और वर्ण पारस्परिक प्रतिक्रिया से सम्मलित भले ही हो जाएँ किन्तु वास्तव मे वे भिन्न है।

भारत वर्ष की सामाजिक परिस्थितियों के कारण '' उस समय की वर्ण व्यवस्था को उससे पूर्व जातीय और वर्गीय विभाजनों से मिला दिया गया। '' वेदों मे शूद्रों का वर्णन नही है। उनमें तो केवल दस्युओं का नाम है। इससे मालूम होता है कि तब तक इन दस्युओं को आर्यो ने अपने साथ नही मिलाया था। बाद मे जब इन दस्युओं को आर्यो ने अपना लिया तब चौथे वर्ण का जन्म हुआ। सेनार्ट का मत है कि वर्ण का अर्थ समुदाय या समूह। साधारण रुप से यह वशांनुगत होता था। ब्राह्मणों ने इसी आधार पर चार वर्णो को स्थिर किया किन्तु जाति का अर्थ है वास्तविक जाति जो बिलकुल ठोस हो। ये नियम, जो जाति के लिए बने थे, तत्पश्चात वर्णो के साथ जोड दिए गये। ब्राह्मणों ने वर्ण व्यवस्था को ईश्वरीय तत्वों से जोडने का प्रयत्न किया। उनकी धारणा का आधार ऋग्वेद का पुरुष सूक्त है। उन्होने कहा कि ब्रह्मा के मुख से ब्राह्मण, भुजाओ से क्षत्रिय, उदर से वैश्य और चरणो से शूद्र उत्पन्न हुए।

चूँकि वेदों को अलौकिक बताया गया है, उनके वर्णन को असत्य नही समझा जा सकता। इसलिए उनमें दिए गए वर्ण-विभाजन को देवी आज्ञा मानना होगा। इतिहास का निष्पक्ष- अध्ययन करने वाले विधार्थी को इनमे से एक भी बात तर्क-संगत प्रतीत नही होगी। नॉडिक वर्णो में जाति व्यवस्था पहले से ही विधमान थी। यूनानी और रोमन जातियों में भी स्वतंत्र व्यक्ति और दास हुआ करते थे। आदिकालीन ईरानियों में भी इस प्रकार के भेद थे। सम्पूर्ण यूरोप को प्रभावित करने वाले ऐग्लों-सैक्सनों में भी यही प्रथा थी। अर्ल, सिओर्ल और थियोवा ऐग्लो-सैक्सनों की ही जातियाँ थी। इनमें थियोवा की अवस्था शूद्र से बढकर न थी और दूसरी बात यह है कि ये भेद जन्म के आधार पर थे। इंग्लैण्ड और अन्य देशों मे आज भी काउण्ट् डयूक और आर्कड्यूक उस काल का स्मरण कराते है। यह और बात है कि उनका आधार अब पूर्ववत् नही रहा। अतः लगता है कि उनकी पूर्व कालीन सामाजिक रचना कुछ ऐसे तत्वो के आधार पर हुई थी जो समाज को वर्गो में बाँट दिया करते थे। बाद में जब आर्यो का गंगा-सिन्धु के मैदानो की और आगमन हुआ तब जाति-प्रथा की व्यवस्था और वर्ण दोनो के आधार पर हुई। किन्तु अन्य देशों में अब यह विभिन्नता समाप्त हो चुकी है। कुछ असाधारण परिस्थितियों के कारण भारत के समाज मे यह अप्राकृतिक विभिन्नता अभी तक चल रही है।

बाबा साहेब डॉ भीमराव आंबेडकर सजातीय विवाह को जाति प्रथा की मूल जड मानते है। यहाँ यह बताना असंगत न होगा कि आज दुनिया का कोई अन्य सभ्य देश ऐसा नही है तो आदिम मान्यताओं से लिपटा हो। इस देश का धर्म आदिम है और इसके आदिम संकेत इस आधुनिक काल मे भी पूरे जोर-शोर से इस पर हावी है। इस सिलसिले मे बाबा साहेब बहिगोत्र विवाह का उल्लेख करना चाहते है। आदिम युग में बहिगोत्र विवाहों का प्रचलन सर्वविदित है। युग परिवर्तन के साथ-साथ तो इस शब्द की सार्थकता ही जाती रही और रक्त के घनिष्टतम रिश्ते को छोडकर इस सम्बन्ध मे विवाहों पर कोई प्रतिबंध ही नही रहा। लेकिन भारत मे आज भी बहिगोत्र विवाह प्रथा ही प्रचलित है, हालांकि कबीले नही रहे। विवाह पद्धति इसका प्रमाण है, जो बहिगोत्र प्रथा पर आधारित है यहाँ सीपंड विवाहो पर ही प्रतिबंध नही है, बल्कि सगोत्र विवाह भी अपवित्र माने जाते है।

जति प्रथा का विकास प्राचीन काल मे जाति-प्रथा आसानी से बदली जा सकती थी। कोई भी व्यक्ति एक वर्ण से दूसरे वर्ण में जा सकता था। प्रसिद्ध परसुराम जन्म से ब्राह्मण, किन्तु कर्म से क्षत्रिय था। विश्वामित्र जन्म से क्षत्रिय किन्तु कर्म से ब्रह्मर्षि बन गया था। प्रसिद्ध ऋषि वसिष्ठ वेश्या की सन्तान था। महाभारत का प्रसिद्ध और मूल लेखक व्यास एक धीवरी का पुत्र था। ऋग्वेद के एक स्त्रोत्र के रचयिता का कथन है मै स्त्रत्रों का रचयिता हूँ मेरा पिता वैध है और माँ चक्की पीसती है। हम सभी विभिन्न कार्यो मे लगे है। समय के साथ-साथ यह जाति प्रथा दृढ से दृढतर होती गई और उसका लचीलापन कम होता गया। परिणामस्वरुप एक जाति से दूसरी जाति में वर्ण परिवर्तन असम्भव हो गया। ये जातियाँ कर्म गत न होकर जन्म-गत हो गई। बाद में इन जातियों की उप-जातियाँ बनती गई और प्रत्येक उप जातियों का जन्म कभी किसी भूल-चूक हो जाने से भी हुआ होगा। आर्यो अनार्यो के मिलन से भी कुछ नवीन जातियों को जन्म मिला होगा। इस प्रकार यह जाति-प्रथा या वर्ण व्यवस्था सभ्यता-प्रसार का एक साधन थी, जिससे नए लोगों को आर्यो के समाज मे स्थान दिया गया।

जाति का यह बन्धन बाद के वैदिक समाज मे भी आ गया। इस काल की अस्पृश्यता या छूआछूत के अच्छे खासे और रोचक उदाहरण सूत्रों में उपलब्ध होते है। गौतम सूत्र में कहा गया है कि ब्राह्मण को ब्राह्मण या क्षत्रिय का ही भोजन ग्रहण करना चाहिए। विशेष परिस्थितियों मे उसे यदि शूद्र से कुछ प्राप्त हो तो वह ले सकता है किन्तु साधारणतः नही।

एक और सूत्र के अनुसार '' किसी को भी नीच जाति के लोगो को शिक्षित नही करना चाहिए। न उनके लिए यज्ञ करना चाहिए और न उनसे समागम ही करना चाहिए।'' शूद्र जाति के सम्बन्ध मे नियम काफी कठोर हो गए थे। किन्तु तीनों उच्च वर्णो में अभी ऐसी बात न थी। निश्चित रुप से नही कहा जा सकता कि वैदिक युग में ब्राह्मण को क्षत्रिय से ऊँचा माना जाता था या नहीं। राजकुमार और क्षत्रिय सम्भवतः अपने आपको ब्राह्मणों से ऊँचा मानते थे। किन्तु शायद उनकी यह लालसा मान्यता प्राप्त न कर सकी।

समय के साथ-साथ जाति-प्रथा का विस्तार होता गया। बौद्ध और जैनी पूर्णतया निरामिष-भोजी थे। अतः इस आधार पर ही उनके अलग वर्ग बन गए। हिन्दुओं द्वारा हस्तक्षेप किए जाने पर उनकी और विभिन्न जातियाँ बन गई। जब यूनानियों ने भारत पर आक्रमण किया तो आर्यो ने उनके साथ मिलना स्वीकार न किया और उन्हे यवन कह कर पुकारा। किन्तु बाद मे जब इण्डो-बैक्ट्रियन और इण्डो-पार्थियन भारत मे बस गए और हिन्दू-समाज मे घुल-मिल गए तो निवास की पारस्परिक विशेषताओं के कारण अलग ही उपजातियाँ बन गई।

इसी प्रकार जब हूण जाति घुल-मिल गई तो नवीन उपजातियाँ सामने आई। जातियों मे परस्पर विवाह हो जाने के कारण भी नवीन उपजातियों का जन्म हुआ। बाहर से आने वाले को जाति-व्यवस्था के कारण रहन-सहन का एक निश्चित हिन्दू-ढंग अपनाना पडा। अपने क्षेत्रो मे तो वे अपने ही ढंग से रहते थे।

मुसलमान आक्रमणकारियों ने जाति-प्रथा को और अधिक कडा कर दिया। मुसलमानों ने भारत और उसकी संस्कृति दोनों पर ही एक साथ आक्रमण किया और हिन्दुओं ने अपनी जाति-प्रथा को और अधिक दृढ करके इन मुसलमानों के मिश्रण से अपनी रक्षा की। विभिन्न जातियों की मित्रता किसी भी व्यक्ति को इस बात की आज्ञा नही देती थी कि वह उनके विश्वासों का आदर करे या उन्हे आघात पहुँचाऐ। इसके अतिरिक्त उच्च जाति ने नीच जाति के उन लोगों से घृष्णा करनी आरम्भ कर दी, जो मुसलमानों से किसी प्रकार का भी सामाजिक नाता स्थापित कर रहे थे। इस प्रकार उच्च जाति के लोगो ने नीच जाति के ऐसे लोगो को म्लेच्छ कह कर पुकारा। अतः कहा जा सकता है कि इन मुस्लिम आक्रमणकारियों के कारण ही नीच जाति और उच्च जाति में तनाव पैदा हो गया। इसके अतिरिक्त इस्लाम के प्रचार की रोकथाम के लिए वैष्णव पन्थ शैव पन्थ दादू पन्थ सतनाम पन्थ और इनकी शाखाओं ने अनेक उपजातियों को जन्म दिया। केतकर का कहना है कि इन चार वर्णो ने लगभग 3000 जातियों को जन्म दिया।

विभिन्न जातियों की स्थिति -ब्राह्मण समाज मे सबसे ऊँचा माना जाता था। धर्मशास्त्रों के अनुसार उनका कर्तव्य था वैदिक साहित्य का पढाना और पढना तथा दूसरो के लिए और अपने लिए यज्ञ करना। वे लोगो से मिलने वाली भिक्षा और विभिन्न धार्मिक संस्कारों को कराने के समय मिलने वाली दक्षिणा से अपना निर्वाह करते थे। यह उच्च कोटि का बौद्धिक वर्ग था। इसी वर्ग में से उस समय के बुद्धिमान लोग जन्म लिया करते थे। समाज उनसे नैतिक आदर्श और सादा जीवन बिताने की आशा करता था। शक्ति, सम्पति और सांसारिक प्रलोभनों से उन्हे कोई सरोकार न होता था। उनका एक ही उद्देश्य था और वह यह कि वे दूसरों के लिए आदर्श उत्तम जीवन व्यतीत करते हुए सत्य की कामना करे। कभी-कभी वे उच्च कोटि के सैनिक भी बन जाया करते थे।

क्षत्रिय देश के प्रशासन और विशेषकर प्रतिरक्षा से सम्बन्धित थे। राजनीति शक्ति सर्वश्रेष्ट और सबसे महत्वपूर्ण शक्ति थी। क्षत्रिय प्रायः अपने आपको ब्राह्मणों से ऊँचा मानते थे। क्षत्रिय के लिए ज्ञान का द्वार खुला था। सम्भवतः उपनिषदो की रचना इन्ही क्षत्रियों ने की थी। राजा जनक अपने समय मे वेदों के अद्धितीय विद्वान थे।

वैश्यो का सम्बन्ध देश के आर्थिक जीवन से था। उनका कर्तव्य सम्पत्ति का उत्पादन करना था। भारत सदा से कृषि-प्रधान देश रहा है, इसलिए वैश्य खेती करते थे और पशु पालते थे। व्यापार और वाणिज्य भी करते थे। कभी-कभी वे राजा और योद्धा भी हुआ करते थे।
शूद्र इण्डो-आर्यो की सबसे विचित्र सृष्टि थी। इन्हे वेदो का अध्ययन करने और यज्ञो पवीत धारण करने की आज्ञा न थी। अस्पृश्य होने के कारण अन्य तीनों वर्ण उनसे घुल-मिल न सकते थे। समाज का यह अंग सर्वथा अविकसित रह गया और इनके जीवन से सुविधाएँ छूँट गई।

जति व्यवस्था के गुण-(1) हिन्दू समाज मे जाति-प्रथा तीन हजार वर्ष से अधिक समय से विधमान है। इससे स्पष्ट है कि इतिहास के विभिन्न कालो मे हिन्दू समाज को इससे अवश्य ही लाभ हुए होगे। निश्चय ही इस जाति-प्रथा ने आज तक हिन्दू-धर्म तथा उसकी संस्कृति को अक्षुण बनाए रखा है। जाति-प्रथा की पृथक रहने की भावना ने ही हिन्दुओं को विदेशियों के साथ घुलने मिलने से बचाए रखा। अतः यूनानी, हूण और मुसलमान हिन्दू संस्कृति पर विजय न पा सके, किन्तु इसके विपरीत अधिकाँश विदेशी हिन्दुओं मे समा गए।

(2) जाति-व्यवस्था का ढाँचा महत्वपूर्ण श्रम-विभाजन के आर्थिक सिद्धान्त पर खडा था। इस प्रथा के अनुसार प्रत्येक व्यक्ति बचपन से ही जानता था कि आगे चलकर उसे कौन सा पेशा अपनाना है। अतः वह आरम्भ से ही अपने पिता द्वारा अपनाए गए पेशे को सीखना आरम्भ कर देता था। यही कारण है कि भारतीय इतिहास के प्रत्येक काल मे उच्च कोटि के कार्यकर्ताओ, निपुण व्यक्तियों तथा विद्वानों की कमी नही रही। यही कारण है कि मेगस्थनीज ह्मूनत्साँग, अलनरुनी, इब्नबतूता बाबर और शुरू मे आने वाले अंग्रेज भारतीय कला कौशल से अत्यन्त प्रभावित हुए है।

(3) जाति-प्रथा से समाज-सेवा और समाज द्वारा सहायता को प्रोत्साहन मिला। इस प्रथा ने इच्छुक और गरीब लोगों की सहायता की। कभी-कभी ऐसा भी हुआ है कि एक जाति के लोगों ने अपने गरीब साथियों की सहायता के लिए अलग से धनराशि एकत्र की। इस प्रथा से लोगों में दूसरों की सहायता करने तथा दूसरों के लिए त्याग करने की भावना ने जन्म लिया। लोग व्यक्तिवाद से समष्टिवाद की ओर बढे। इस प्रकार लोगों मे सामाजिक और आर्थिक अनुशासन की वृद्धि हुई।

(4) इसी जाति-प्रथा के कारण ही हिन्दू जाति के विभिन्न वर्गो मे आज तक रक्त की पवित्रता बनी है। हर जाति के वैवाहिक नियम अति कठिन और कडे थे। अन्तर्जातीय विवाह वर्जित थे। इस प्रकार भारतवर्ष जातीय पवित्रता को बनाए रखने में समर्थ हुआ।

(5) मसानी का विचार है कि '' भारत की जाति-प्रथा अत्यन्त संगठित है। इस प्रथानुसार एक जाति दूसरी जाति पर निर्भर है। चारों जातियों का परमात्मा की आज्ञा से अस्तित्व मे आना एक दूसरे से श्रेष्ठ होना और ब्रह्मा के विभिन्न अंगो से उनके उत्पन्न होने का विचार भी इस बात की पुष्टि करता है।

जाति व्यवस्था के दोष - (1) जाति-व्यवस्था और विशेषतः वर्तमान जाति व्यवस्था मे गुणों की अपेक्षा दोष अधिक है। सर हेनरी मेन ने इसे '' अत्यन्त भयंकर और मानव परिवार के लिए हानिकर बताता है।'' यह राष्ट्र विरोधी प्रथा है। जाति गत अन्धविश्वासों और शत्रुताओं ने हमारे इतिहास को सदा प्रभावित किया है। भारत पर जब भयंकर विदेशी आक्रमण होने आरम्भ हुए तब केवल क्षत्रियों को आक्रमणकारियों के विरूद्ध लडना पडा। अन्य जातियों के लोग अपने घरों मे बैठे रहे। इसका परिणाम अत्यन्त भयंकर हुआ। राजपूतों और मराठों के समय मे उत्पन्न होने वाली विपतियाँ भी इसी जाति-प्रथा का परिणाम थी।

(2) जन्म के सिद्धान्त पर आधारित जाति-व्यवस्था ठीक नही। गीता के अनुसार सामाजिक विभाजन कर्म और गुण को आधार मान कर होना चाहिए न कि जन्म को। कारण यह कि जन्म पर आधारित जाति-व्यवस्था के अनुसार नीच वंश मे जन्म लेने के कारण बहुत से लोगो को उत्तम योग्यता होने पर भी राष्ट्र मे ऊँचे पदों से वंचित रखा जाता है। इसके विपरीत उच्च वंश और उच्च जाति के मूर्ख लोगो को दायित्व पूर्ण काम सौंप दिए जाते है। इन कारणों से जाति प्रथा वास्तव मे निन्दनीय है।

(3) वी. ए. स्मिथ ने लिखा है कि इस प्रथा का मुख्य दोष यह है कि '' यह भारतीयों को विदेशियो से खुले आम घुलने मिलने नही देती। '' अतः भारतीय केवल जाति व्यवस्था के कारण ही विदेशियों को ठीक प्रकार से समझने मे असमर्थ रहते है। विशेषकर ऊपर की तीन जातियाँ और उनमें भी खासकर ब्राह्मण विदेशियों से मिलना पसन्द नही करते। खेद की बात तो यह है कि भारत पर राज्य करने वाले अग्रेंजों से भी मिलना उन्होने पसन्द नही किया।परिणाम यह हुआ कि भारतीयों और विदेशियों के बीच हार्दिक सम्बन्ध कभी स्थापित न हो सके।इतिहास के विभिन्न काल उपर्युक्त तथ्य के साक्षी हैं।

(4) जाति-व्यवस्था ने हिन्दुओं के दृष्टिकोण को भी संकीर्ण बना दिया। उनके हृदय में राष्ट्र-प्रेम की भावना कम हो गई और राष्ट्रीय विकास को बडा आघात पहुँचा।

(5) छूत छात जाति-व्यवस्था का सबसे बडा कलंक है। उच्च जाति के लोग निम्न जाति के लोगो को मानव नही समझते थे। निम्न जाति के लोगों से घृष्णा की जाती थी। उनके स्पर्श तक को सहन नही किया जाता था। इस जाति के लोग उच्च जाति के लोगों के बर्तनो और वस्त्रों तक को नही छू सकते थे। इतना ही नही उन्हे उच्च जाति के लोगो के कुओं से जल लेने तक की आज्ञा न थी। बस, यों कहिए कि उच्च जातियों की दृष्टि मे वे मनुष्य न होकर पशु थे। इस प्रकार मानव जाति का एक बडा वर्ग अधिकारो से वंचित रह जाया करता था। अतः आज के युग का मानव इसी भार को न सह सका और परिणामस्वरूप आज की भारत सरकार ने संविधान की शक्ति से छुआछूत के सभी प्रकारो को समाप्त कर दिया।

(6) जाति-व्यवस्था समान अधिकारों और प्रजातंत्र के हितों को चोट पहुँचाने वाली प्रथा है इस प्रथानुसार न तो कोई अपनी इच्छा से किसी पेशे को अपना सकता है और न ही विशेषाधिकारों का समान उपभोग कर सकता है। इस बन्धन मे बँधा व्यक्ति अपनी इच्छा से विवाह भी नही कर सकता। यह कहना उपयुक्त होगा कि इस प्रथा के उपर्युक्त सभी दोष प्रजातंत्र के लिए घातक है।

(7) रॉलिन्सन का विचार है कि भारतीयों को जाति-प्रथा के विभिन्न और दृढ भागो में कठोरता के साथ विभक्त कर देने का परिणाम यह हुआ कि राष्ट्रीयता की भावना उनमें से विलुप्त होती गई।यही कारण है कि विदेशी लोग सदियों तक भारतवर्ष पर राज्य करते रहे।

(8) इस प्रथा ने हिन्दू समाज के संगठन को समाप्त कर दिया, व्यक्तिगत स्वतंत्रता को छीन लिया और जनसाधारण को पीडित करने वाले एक यन्त्र का रुपधारण कर लिया। जाति-व्यवस्था हिन्दू समाज के गले में पडा हुआ पत्थर है जो उसे राजनीतिक और सामाजिक पतन की ओर घसीटे लिए जा रहा है। जाति प्रथा के लाभो का अन्त हो चुका है। आज के युग मे वर्ण व्यवस्था और इसके अन्ध विश्वासों के अनुसार जीवन बिताना कठिन है।

निष्कर्ष

हिन्दू धर्म मनुस्मृति पर आधारित है, जिसमें वर्ण व्यवस्था का उल्लेख किया गया है और पूरे समाज को चार वर्णो में बांटा गया है। प्रत्येक वर्ण भी जाति उप जातियों मे बटा हुआ है। जब तक हिन्दू धर्म से जाति व्यवस्था खत्म नही होगी, तब तक भारतीय समाज से भेदभाव, छुआछूत खत्म नही होगा। डॉ. अम्बेडकर ने कहा कि अगर हिन्दू समाज से जाति को खत्म करना है तो अंतरजातीय विवाह और अन्तर्जातीय भोज को अपनाना होगा। जाति, छुआछूत और अस्पृश्यता जैसे शब्दो को समाज से खत्म करने के लिए अंतरजातीय विवाह होने चाहिए, जिससे खून का मिलना ही अपनेपन का भाव उत्पन्न कर सकता है। वर्तमान समय में हम देखते है कि अंतरजातीय विवाह

और अंतरजातीय भोज होने लगे है। इससे समाज में अस्पृश्यता और छुआछूत तथा भेदभाव कम हुआ है। लेकिन पूरी तरह खत्म नही हुआ है। समाज मे अभी भी छुआछूत और भेदभाव व्याप्त है। हमें अपनी सोच को वैज्ञानिक बनाना होगा तभी समाज से कुरीतियाँ और अंधविश्वास खत्म हो सकते है।

सन्दर्भ ग्रन्थ

[1]. भारत मे जाति प्रथा डॉ भीमराव अम्बेडकर सम्पादक बिजेन्द्र कुमार सुरोलिया
[2]. प्राचीन भारत का इतिहास वी. डी. महाजन
[3]. भारत मे केस रोग की उत्पत्ति और विकास लेखक दत्त एन के
[4]. भारत की विरासत 1938 - गैरेट जी. टी.
[5]. भारत मे जाति और वर्ग (1967) धुर्या जी. एस.
[6]. प्राचीन भारत में आर्थिक समूह और जाति व्यवस्था इतिहास पत्रिका, 1965 पृष्ठ 771-81 लेखक गोपाल,एल
[7]. भारत मे जाति व्यवस्था 1952 लेखक हटन जे. एच
[8]. भारत मे जाति का इतिहास 1911 लेखक केलकर एस. वी.
[9]. भारत मे जाति व्यवस्था लेखक सेनार्ट ई.
[10]. जाति व्यवस्था का राजनीतिक-कानूनी पहलू (पृष्ठ 306-330 जर्नल ऑफ बिहार रिसर्च सोसाइटी 1953) लेखक शर्मा रामशरण
[11]. ऑक्सफोर्ड हिस्ट्री ऑफ इंडिया लेखक स्मिथ वी. ए.
[12]. डॉ भीमराव अम्बेडकर विचार और विश्लेषण लेखक प्रो. डॉ बाबूलाल मीना, डॉ. आशा सिंह रावत